

$\frac{5}{92}$

३४

$\frac{5}{92}$
~~२४२~~
~~२४२~~
२४२
२४

मासिक पत्र

वारह्याण

धार्मिक

(हिन्दीका धार्मिक, सचित्र मासिक पत्र)

P. O. GITA PRESS (Gorakhpur) India.

ग्राहक नं०

श्रीयु

122. Sri Mumukshu Bhawan, मुमुक्षु भवन
Assighat, Kashi, Varanasi

३
४१
२७८

फ ५
७८
११८
२२

॥ श्रीः ॥

श्रीमच्छङ्कराचार्यप्रणीतं

गोविन्दाष्टकम् ।

आनन्दगिरिकृतसंस्कृतटीकासहितं

सनातनमहामण्डलमहोपदेशक-सिकोहाबादनिवासि-
पंडितवर-कन्हैयालालशर्माविरचित-

भाषाटीकासहितं च ।



तदिदम्

प्रथमावृत्तौ

खेमराज श्रीकृष्णदासश्रेष्ठिना

मुम्बय्यां

रवकीये " श्रीवेङ्कटेश्वर " (स्टीम्) यन्त्रागारे

मुद्रयित्वा प्रकाशितम् ।

संवत् १९६२, शके १८२७.

पुनर्मुद्रणादि सर्वाधिकार " श्रीवेङ्कटेश्वर " प्रेसाध्यक्षने स्वाधीन रक्साहे.

५/२४२

श्रीः ।

॥ श्रीगणेशगिरिगुरुभ्यो नमः ॥

अथ गोविन्दाष्टकम् ।

संस्कृतभाषाटीका सहितं प्रारभ्यते ।



अवतरणिका—इह खलु सकललोकहिताऽवता-
रो भगवान् महाविष्णुर्भुवा विनयतयाऽर्थितो भूभा-
रपरिजिहीर्षया यदुकुले किलाऽवतीर्णस्सनकादि-
मुनिजनैरनुदिनमनुगीयमानसच्चरित्रो भगवान्
नन्दवेशमनि विजहार तमेव विहारमष्टभिः श्लोकैः
सत्यमित्यादिभिर्वर्णयन् भगवत्पूज्यपादमुनिर्निर-
स्तसमस्तविशेषसच्चिदानन्दाऽद्वयपरमात्मानम-
भिष्टौति—

भाषा—जिसके शुभ चरित्र सनकादि ऋषिसमूहद्वारा प्रतिदिन गायेजात
हैं, जिसके कोई बराबर तथा विशेष नहीं, जो सत् चित् आनन्दकन्द जग-
दीशहैं, वही श्रीकृष्णचन्द्र यहाँ जीवधारियोंके निश्चयात्मक कल्याण निमि-
त्त, एवं पृथ्वीकी सविनय प्रार्थना श्रवण कर उसके भार उतारनेको याद-

वकुलमें प्रकट हो नन्दजीके मन्दिरमें लीलाविहार करतेभये, उसी लीला-
विहारको श्रीपूज्यपाद शङ्कराचार्यजी महाराज (सत्यंज्ञानमनन्तं) इत्यादि
आगामी आठ श्लोकोंसे कहतेहुये श्रीकृष्णपरमात्माकी स्तुति करतेहैं ॥

सत्यंज्ञानमनन्तं नित्यमनाकाशं पर-
माकाशं गोष्ठप्राङ्गणरिङ्गणलोलमना-
यासं परमायासम् ॥ मायाकल्पितना-
नाकारमनाकारं भुवनाकारं क्षमामाना-
थमनाथं प्रणमत गोविन्दं मरमानन्दम् १

सं०—सत्यमिति ॥ परमश्चासावानन्दश्चेति पर-
मानन्दस्तं निरतिशयानन्दं गोभिर्गीर्भिस्तत्त्वम-
स्यादिवाक्यैर्विद्यते उपलभ्यते इति गोविन्दस्तं प्र-
णमत प्रकर्षेण भक्तिश्रद्धाऽतिशयेन नमत वाङ्मनः
कायैरर्चयत । अर्चनायां किं फलमित्याकांक्षायां
परमेश्वरप्रसादेन सत्यज्ञानादिलक्षणया परमार्थप्रा-
प्तिरेव मुख्यफलमित्यभिप्रेत्य विशिनष्टि सत्यमि-
त्यादिना । सत्यमबाध्यं ज्ञानान्तरेण विषयासत्त्व-

प्रतीतिर्बाधः तद्योग्यत्वं शुक्तिकादावारोपिताऽपर-
जतादेः विवेकज्ञानेन तथा बाध्यत्वमस्याकल्पित-
त्वात् रूपान्तरप्राप्त्यभावाच्च । नन्वस्य सत्यत्वे प्र-
माणमस्ति न वा अस्ति चेत् तद्विषयत्वेन घटादिव-
द्विषयत्वमापद्येत नास्ति चेत्कथं सत्यत्वसिद्धिरि-
त्याशङ्क्य परमात्मनः स्वयंप्रकाशत्वात् ज्ञानत्वाच्चा
ऽनन्तम् अन्तः सीमा इयत्ता न विद्यते यस्य सोऽन-
न्तस्तं देशतः कालतः वस्तुतः न परिच्छिद्यते “यच्च
किञ्चिज्जगत्यस्मिन् दृश्यते श्रूयतेऽपि वा अन्तर्बहि-
श्च तत्सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः” इति परमात्म-
नः सर्वगतत्वाऽवगमात् न च कालतः परिच्छिद्यते
‘न जायते म्रियते वा कदाचित्’ इत्यात्मनोजन्मवि-
नाशप्रतिषेधः नापि वस्तुतः परिच्छिद्यते अस्य नि-
खिलोपादानत्वेन स्वव्यतिरिक्तदस्त्वन्तराभावात्
‘आदावन्ते च यन्नास्ति वर्तमानेऽपि तत्तथा’ इति
न्यायात् तस्मादनादि अविद्याकल्पितस्य निखिल-

द्वैतस्य रज्जुसर्पादिवत्दृश्यत्वेनाऽधिष्ठानमात्रारब्ध-
 त्वात् अतएव “नित्यमविनाशिनं नित्यं विभुम्”
 इति श्रुतेः “अविनाशि तु तद्विद्धि” इति स्मृतेश्च
 सर्व्वदा विद्यमानमित्यर्थः । ननु नित्यमाकाशादे-
 स्ताव दात्मनः सकाशादुत्पत्तिश्रवणादनित्यत्वादेवं
 नित्यस्यात्मनोऽनित्यत्वं स्यादित्याशंक्यः तस्य
 चाकाशविलक्षणत्वे जन्माद्यभावान्नित्यत्वं सुस्थित
 मित्याशयेनाह अनाकाशमिति “अन्यतमोऽ-
 वाद्यनाकाशम्” इति श्रुतैः । आकाशाद्व्यतिरिक्तस्त-
 त्संगरहितत्वाच्चेत्यर्थः । जन्माद्यभावविलक्षणत्वादेव
 परमाकाशम् आसमन्तात् काशते इत्याकाशः पर-
 मश्चासावाकाशश्चेति परमाकाशस्तं परमाकाशमि-
 त्यर्थः । येन सूर्यस्तपति तेजसेद्धः “तमेव भान्तमनु-
 भाति सर्व्वम्” इति श्रुतेः “ज्योतिषामपितज्ज्योतिः”
 इति स्मृतेश्च अतएव तदभिष्टुत्वपदतयाऽभिष्टौति
 गोष्ठप्राङ्गणेति गावः श्रोत्रादीनीन्द्रियाणि तिष्ठं-

त्यस्मिन्निति गोष्ठश्चिदधिष्ठितोऽहंकारः स एवास्य
 प्राङ्गणमभिव्यक्तिस्थानं नृत्यरंगो वात्र रिङ्गणं
 खेलनं कार्य्यकारणसंघातप्रेरकत्वम् अतएव लो-
 लम् “ य आत्मनि तिष्ठन्नात्मानमन्तरोयम् ” इति
 श्रुतेः ‘ ईश्वरः सर्वभूतानाम् ’ इति भगवद्वचनाच्च कार्य्य
 कारणसंघातप्रेरकत्वेन लोलमित्यर्थः । तर्हि प्रेरक-
 त्वेनाऽऽयासमुक्तमित्याशङ्क्याह अनायासमिति-
 अयस्कान्तवत् संनिधिमात्रेण प्रेरकत्वेनाऽनाया
 समायासरहितमित्यर्थः । तथा बुद्धिधर्माध्यासेन
 परमायासं परमोऽत्यन्तायासः कर्तृत्वभोक्तृत्वलक्ष
 णो यस्य परमायासस्तम् ‘ श्रोत्रं चक्षुःस्पर्शनं च ’ इति
 भगवद्वचनात् संसारदुःखादिविषयमित्यर्थः । ननु
 एकस्मिन्नेव कथं द्वयं घटेत इत्याकांक्षायामस्य
 मायामयत्वान्नायं दोष इत्याशयेनाह मायाकल्पि-
 तमिति अघटितघटनापटीयसी माया तथा कल्पि-
 तो नानाकारं शरीरभोगायतनं यस्य स तथोक्तस्तम्
 शरीरादेर्मायानिबन्धत्वात्तन्निबन्धनः स आयासोऽ

पि तथाविध इत्यर्थः। ननु नानाकारश्चेत्कथं निरूप
 निर्गुणेऽप्यखंडिते मयि चिति विकल्पनाऽतिशून्ये
 स्वपतिजगदीशजीवभेदघटनघटापटीयसी माया
 इत्यादिवचनसंगतिरित्यत आह अनाकारं शरीर
 भोगराहित्यश्रवणान्नित्यमुक्तमित्यर्थः। नन्वनाकार
 श्चेत्कथं 'ब्रह्माद्याः स्थावरान्ताः प्राणिनो मम स्युः'
 स्मृतौ इति वेदान्तवाक्यं संगच्छत इत्यत आह
 भुवनाकारं भुवनं मायामयमाब्रह्मस्तंबपर्यंतमा-
 कारो यस्य स तथोक्तस्तं तथोक्तं हरिमीडे सर्वत्रास्ते
 सर्वशरीरीति भगवत्पादवचनादपीत्यर्थः ननु 'पराऽ
 स्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते' इति श्रुतेश्च । क्षमामा-
 नाथं क्षमा भूमिर्मा लक्ष्मीः तयोर्नाथं स्वयमनाथं
 स्वतंत्रमेव प्रपंचयति परमिति आनन्दं ब्रह्म 'अय-
 मात्मा ब्रह्म' इति श्रुतेः परमानन्दमुपमानरहितमान-
 न्दरूपं गोविन्दं प्रणमत इत्यर्थः ॥ १ ॥

भाषाटीका—जो (परमानन्दं) सर्वोपरि आनन्दयुक्त है (गोविन्दं)
 जो तत्त्वमसि आदि वेदवाक्योंसे जानाजाता है (प्रणमत) उसको

भक्तियुक्त श्रद्धापूर्वक मन वाणी कर्मसे नमस्कार पूजन करो । यदि कहो कि, उसके पूजनादिसे हमको क्या लाभ है तो उत्तर यह है कि, परमेश्वरकी कृपासे सत्य ज्ञान आदि पदार्थोंके यथावत् ज्ञान होनेसे मोक्षप्राप्ति ही फल है इस अभिप्रायसे ईश्वरके सत्यज्ञानादि विशिषण कहते हैं कि, वह (सत्य) भूत, भविष्य, वर्तमान तीनों कालोंमें सच्चा है झूठा कभी नहीं- जैसे सीपमें दूरसे चाँदी मालूम होती है परन्तु समीप आनेसे चाँदी नहीं रहती इसप्रकार ईश्वरमें वाद्यभ्रम सन्देह नहीं है वह त्रिकालमें एकसाही है । अथवा यह कहो कि, ईश्वरके सत्य होनेमें क्या प्रमाण और यदि प्रमाण प्रत्यक्ष, अनुमान, आप्तवचनादि हैं तो घट पट आदिकी भांति वह भी विषय हुआ फिर सच्चा कैसा । इसपर समाधान करते हैं कि, वह (ज्ञान) स्वयंप्रकाश अर्थात् अखंड ज्ञान-युक्त है इसीसे वह (अनन्त) अनन्त है जिसकी सीमा नहीं अर्थात् जैसे देशकी मर्यादा कोशोंसे और काल समयकी घड़ी आदिसे वस्तुकी तोल आदिसे इसप्रकार देश, काल, वस्तुसदृश ईश्वरका अन्त नहीं है ऐसा ही शास्त्रकारोंने भी कहा है कि, जो कुछ संसारमें देखा, सुना, भीतर, बाहर, है वह सब नारायण ही व्याप रहा है और वह (नित्य) नित्य है जैसे घड़ा, मकान आदिकी मिट्टी उपादान कारण है अर्थात् जबतक घड़ा नहीं बना था तबतक पहिले मिट्टी थी, और जब घड़ा बन गया तब भी उसमें मिट्टी है और जब घड़ा फूट गया तब भी मिट्टी बनी रही इसी भांति इस संसारके उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय अर्थात् आदि मध्य अन्त तीनों समय उपादान कारणरूपसे रहता हुआ स्वयं नित्य है ।

इसपर यदि शंका करो कि, आकाशादिकोंकोभी नैयायिकोंने नित्य कहाहै परन्तु उस ईश्वरसे आकाश उत्पन्न हुआ इस श्रुतिप्रमाणसे आकाश अनित्यभी पायाजाताहै इसी रीतिपर ईश्वरभी हो इसपर समाधान करतेहैं कि, वह (अनाकाशं) आकाशादि विषयोंसे भिन्न जन्ममरणादिक्लेशोंसे अयुक्त नित्यहीहै और वह (परमाकाशं) अतिशय प्रकाशवान् है ऐसाही श्रुतिमेंभी कहाहै कि, जिसके तेजमें सूर्य्य प्रकाशित है जिसके प्रकाशमें सर्व प्रकाशितहैं और इसीकी पुष्टि स्मृतिनेभी कीहै कि, वह सर्वप्रकाशकोंकाभी प्रकाशक है और वह (गोष्ठप्राङ्गणरिङ्गणलोलं) श्रोत्रआदि इन्द्रियोंका स्थानभूत जो अहंकार तद्रूपी आंगनमें प्रेरणा द्वारा खेलताहुआ चंचलितहै । इसीको श्रुतिभी कहतीहै कि, जो प्रत्येक इन्द्रियोंमें रहताहुआ इन्द्रियोंसे नहीं जानाजाता वह ईश्वरहै और श्रीकृष्ण-चंद्र भगवान् नेभी अर्जुनसे गीतामें कहाहै कि, समस्त जीवोंके हृदयमें निवास कर सबको चक्रके समान घुमारहाहै । अथवा व्रजकी गोशालां ओंके आँगनोंमें गौ वत्सोंके पीछे दौड़नेमें चंचलहै । यहां यदि शंका करो कि, सर्वप्रेरक होनेसे ईश्वरमें कुछ श्रमभी होताहोगा, तहां समाधान करतेहैं कि, वह (अनायासं) परिश्रमरहितहै जैसे चुम्बक पत्थरके समीप आनेसे लोहेकी सुई हिलनेलगतीहै तो क्या चुम्बकको कुछ श्रम होताहै कुछ नहीं इसीप्रकार प्रेरक होनेपरभी ईश्वर श्रमरहितहै और वह (परमायासं) मन, बुद्धि, चित्त, अहंकारके द्वारा कर्त्ता, भोक्ता सुखी, दुःखी होनेसे अंत्यन्त श्रमयुक्तहै । इसपर यदि शंका करो कि,

एक ईश्वरमें श्रमरहित तथा श्रमयुक्त दोनों कैसे घटसकेहैं । इसपर समाधान यहहै कि, (मायाकल्पितनानाकारं) जो बात नहींहै उसको सिद्ध करनेवाली मायाके योगसे मानेगयेहैं बहुत आकार जिसके । अर्थात् शरीरादिकोंमें माया सम्बन्धसे उसका बन्धनहै सो मायाही जब असत्यहै तो फिर उसको श्रमयुक्त कहना कल्पनामात्रहै इस कारण वह शुद्ध, बुद्ध मुक्त है और वह (अनाकारं) शरीरके भोग-आदि सुख दुःखोंसे रहित होनेके कारण आकाररहितहै अर्थात् आकारवानोंके सदृश शरीरजनित क्लेशोंसे रहितहै । इसपर यदि यह शंका करो कि, जो ईश्वर निराकारही है तो फिर ब्रह्माको लेकर स्थावर जंगम जो कुछ देखने सुननेमें आताहै वह सब ईश्वरहीहै यह वेदान्त वाक्यकी सार्थकता कैसे होगी ? इसपर कहतेहैं कि; (भुवनाकारं) ब्रह्मलोकसे लेकर पातालपर्यन्त समस्त आकार उसीकाहै इसीको (हरिमीडे) स्तोत्रमेंभी प्रतिपादन कियाहै कि, ईश्वर सबमें रहताहै और सर्वशरीर उसीके हैं और वह (क्षमामानाथं) पृथ्वी तथा लक्ष्मीका स्वामीहै और स्वयं (अनाथं) स्वतंत्रहै ऐसे परमानन्दस्वरूप गोविन्दको पूर्णभक्तिसे नमस्कार करो ॥ १ ॥

अवतरणिका—ननु 'मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद' इत्यादिश्रुत्या सर्वेषां शिक्षामूलकमेव ज्ञानं प्रतिपादितं परन्तु तस्याऽशिक्षत्वं दर्शयति मृत्सेत्यादिना ।

भाषा—यदि यह शंका हो कि, माता, पिता, आचार्य आदिक उपदेशद्वारा मनुष्योंको ज्ञान होता है इसीप्रकार ईश्वरकाभी क्या कोई शिक्षक है इसका समाधान करते हुए ईश्वरको किसीकीभी शिक्षा नहीं है इस बातको (मृत्सामत्सी) इस आगेके श्लोकसे निवेदन करते हैं ॥

मृत्सामत्सीहेति यशोदाताडनशैशव-
संत्रासं व्यादितवक्त्रालोकितलोकालो-
कचतुर्दशलोकालिम् ॥ लोकत्रयपुरमू-
लस्तंभं लोकालोकमनालोकं लोकेशं-

परमेशं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दमूर

सं०—मृत्सामत्सीति ॥ हेकृष्ण ! (इह)

अस्मिन् मन्दिरे क्षीरादिभोगाढ्ये (मृत्सां) मृत्तिकां
किम् (अत्सि) भक्षयसि यशोदाकर्तृताडनं यशोदा
ताडनं तस्मिन् समये शैशवः शिशुत्वसम्बन्धी संश-
यो भीतिर्यस्य स तथोक्तस्तं बालवद्भीतमित्यर्थः ।
मृद्भक्षणापराधपरिहारत्वेन मात्रे विश्वरूपं दर्शित-
वान् इत्याह व्यादितवक्त्रालोकितेति व्यादितं प्रसा-
रितं यद्वक्त्रं तस्मिन्नालोकिता दर्शिता लोकालोक-

चतुर्दशलोकालिः पङ्क्तिर्येन स तथोक्तः लोकान्त
इति लोकाः भूलोकादयः सप्त न लोक्या अस्मा-
भिरित्यलोकास्तेऽतलवितलादयः सप्त एवं चतुर्दश
लोकास्तेषाम् आलिश्वेति विग्रहः किञ्च लोकत्रयपु-
रमूलस्तम्भं लोकानां भुवनानां त्रयं लोकत्रयं तदेव
पुरं तस्य मूलस्तम्भं स्थितिहेतुमित्यर्थः । ‘यदा-
दित्य गतं तेजः’ इत्यादि भगवद्वचनात् लोकाऽऽ-
लोकं लोकः आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तम् आलोक्यते
प्रकाश्यते येन स लोकालोकस्तं स्वयमनालोकः
आलोकान्तररहितः अन्यथा अनवस्था प्रसज्यते
“भीषास्मात् वातः पवते” इति श्रुतेः । लोकानां
वाय्वादीनाम् ईशं प्रेरकम् । “वातादयो महावीर्याः
स्वतंत्रवीर्यशालिनः । तेऽपि भीताः प्रवर्तन्ते ब्रह्म-
णोऽपि भयं मतम्” इति देवेश्वरवचनात् । किञ्च
परमेशं ब्रह्मादीनामपि प्रेरकं सर्वज्ञं सर्वेश्वरं
प्रणमत नमस्कुरुत इत्यर्थः ॥ २ ॥

भाषा—हेकृष्ण ! (इह) इस दूध दही भक्षनआदि समस्त भोज्ययुक्त घरमें (मृत्सां) मिट्टीको (किं) क्यों (अस्ति) खातेहो (इति) इसप्रकार (यशोदाताडनशैशवसंत्रासं) यशोदा मैयाकी कीहुई ताड़नासे बालकोंके समान भययुक्त है । यहांपर यदि शंका करो कि, ईश्वर भययुक्त कैसे-इसपर दूसरा विशेषण कहतेहैं कि, (व्यादित-वक्रालोकितलोकालोकचतुर्दशलोकालिम्) जिस समय यशोदाको मुख खोलकर दिखायाहै तलआदि नीचेके सात लोक और भूआदि सात लोक ऊपरके इत्यादि चौदह लोकोंकी अनेक गणना अपने मुखमें दिखा-ईहै जिसने । और (लोकत्रयपुरमूलस्तम्भम्) पृथ्वी, आकाश, पाताल आदि इन तीनों लोकोंरूपी पुरके मूलस्तम्भ अर्थात् आधारस्थानहै । और (लोकाऽऽलोकम्) आब्रह्मस्तम्भपर्यन्त समस्त जगत् जिसकरके प्रकाशित कियागयाहै । और स्वयं (अनालोकम्) दूसरे प्रकाशसे प्रकाशित नहींहैं । और (लोकेशं) वायुलोकआदि समस्त लोकोंके प्रेरकहैं । तथा (परमेशम्) ब्रह्माआदिकेभी नियन्ता । ऐसे (परमानन्दम्) परमानन्दस्वरूप (गोविन्दम्) गोविन्दको (प्रणमत) मन वाणी, कर्मसे नमस्कार करो ॥ २ ॥

त्रैविष्टपरिपुवीरघ्नं क्षितिभारघ्नं भवरो-
गघ्नं कवल्य नवनीताहारमनाहारं
भुवनाहारम् ॥ वैमल्यस्फुटचेतोवृत्ति-

विशेषाभासमनाभासं शैवं केवलशा-
न्तं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ३ ॥

सं०—त्रैविष्टपेति ॥ त्रिविष्टपे वसन्ति ये
त्रैविष्टपाः देवास्तेषां रिपवः शत्रवो दानवास्तेषु
ये वीराः शूरास्तान् रावणादीन् हन्ति हिनस्तीति
वा तं त्रैविष्टपरिपुवीरघ्नम् । क्षितिभारं हरतीति क्षि-
तिभारघ्नं नन्वेतावता कथं निश्शेषार्थनिवृत्तिलो-
कस्येत्येतदाह भवरोगघ्नं संसारवैद्यमित्यर्थः ।
तत्र हेतुमाह कैवल्यमिति गुरूपसृतिपुरःसरमहा-
वाक्यश्रवणमनननिदिध्यासनेन ज्ञाते ज्ञाने
तत्कार्यनिवृत्तौ निरतिशयानन्दावाप्तिकैवल्यप्रद
मित्यर्थः । भूतात्मा परमात्मा च इत्यादिवचनाच्च ।
असावप्यध्यारोपवशादेव । नवनीताहारं नवेन
नूतनेन शरीरेण नीतं प्रापितं विष्टपजातमाहारो
यस्य स नवनीताहारस्तम् अविद्यावस्थायां विष्ट-
पभोक्तारमित्यर्थः “तयैरेकः पिप्पलं स्वाद्वत्ति”

इति श्रुतेः । भुवनाहारं भुवनं नाम रूपात्मकं जगत्
 अस्याहारं चिन्मात्रावशेषं स तथोक्तः । तर्हि कीदृ-
 ग्विधः केन प्रकारेण कुत उपलब्धुं शक्यते
 इत्याकांक्षायां निष्कलमषबुद्धौ श्रुत्याचार्य्यप्रसादे
 नेत्याह । वैमल्यस्फुटचेतोवृत्तिविशेषाभासम् वैम-
 ल्येन रागादिराहित्येन स्फुटा व्यक्ता बोधे या
 चेतोवृत्तिस्तस्यां विशेषेणापरोक्षतया आभासो
 यस्य तम् । तर्हि बुद्धिग्राह्यत्वेन जडत्वप्रसंग इत्यत
 आह । अनाभासमिति—“यस्यामतं तस्य मतम्”
 इत्यादिश्रुतेरदृश्यत्वं निश्चयाद्विषयतया न आ-
 भासो भानं विद्यते यस्य सोऽनाभासः । “न तत्र
 चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति नो मनो न विद्मः”
 इत्यादिश्रुतेश्चक्षुरादीनामगोचरत्वात् स्वतः स्फुर-
 तीत्यर्थः ॥ अतएव शैवं स्वार्थं तद्धितविधानात्
 शैवं कल्याणरूपमित्यर्थः । तत्र हेतुः केवलं शान्तं
 “साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च” इति श्रुतेः केव-

लचिन्मात्रावशेषतया शान्तसंसारभूमिमित्यर्थः
यत्र त्वस्य सर्वमात्मैवाभूत्तत्केन कं पश्येत् “केनक
म्” इति श्रुतेः मुक्तावस्थायां दर्शनक्रियाशून्यत्वात्
केवलचिद्रूपमिति भावः । एवं पूर्वविशेषणविशिष्टं
परमानन्दस्वरूपं गोविन्दं प्रणमतेत्यर्थः ॥ ३ ॥

भा० टी०—(त्रैविष्टपरिपुवीरघ्नं) स्वर्गनिवासी देवताओंके शत्रुओंमें
जो वीर हिरण्यकशिपु रावण आदि उनके नाश करनेवाले (क्षितिभारघ्नं)
पृथ्वीके भार उतारनेवाले तथा (भवरोगघ्नं) संसारके जो जन्म, मरण
आदि क्लेशरूपी रोग उनके नाश करनेवाले (कैवल्यं) मोक्षरूप एवं (नव-
नीताहारं) नवीन नवीन प्राप्तहुए हैं सांसारिक समस्त आहार जिसको
अथवा यशोदा आदि ब्रजगोपियोंसे नवनीत मक्खनको भोजन करनेवाले
(अनाहारम्) आहारादि भोक्तव्य श्रोतव्यादि विषयोंसे रहित तथा (भुव-
नाहारं) समस्त संसारमात्र है आहार जिसका अर्थात् प्रलयकालमें समस्त
लोकालोक जिसमें लीन होजाते हैं एवं (वैमल्यश्रुतिचेतोवृत्तिविशेषाभासं)
निर्मल शुद्धब्रह्म प्रतिपादक श्रुतिविचारजन्य चित्तवृत्तिद्वारा आभास ज्ञान-
होता है जिसका अन्यथा (अनाभासं) अविद्याग्रसित मलिन दुर्बुद्धियोंको
जिसका भान, प्रकाश नहीं होता ऐसे (शैवं) कल्याणस्वरूप (केवल-
शान्तं) निरन्तरशान्तिरूप (गोविन्दं) इन्द्रियप्रेरक (परमानन्दं)
अखण्डानन्द ईश्वरको (प्रणमत) मन वाणी कर्मसे प्रणाम करो ॥ ३ ॥

गोपालं प्रभुलीलाविग्रहगोपालं कुल-
 गोपालं गोपीखेलनगोवर्द्धनधृतलीला-
 लालितगोपालम्॥गोभिर्निगदितगोवि-
 न्दस्फुटनामानं बहुनामानं गोधीगो-
 चरदूरं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम्४॥

सं०—ननु कैवल्यचिद्रूपत्वे कथं भक्तानुग्राहकत्व-
 मिति चेन्नैवम् अस्याप्यचिन्त्यशक्तिमत्त्वेन स्वे-
 च्छाविहारलोकलीलानिदर्शनाय गोपालमित्याह।
 गोपालमिति गोपवेषेण गाः पशून्पालयतीति गो-
 पालस्तंप्रभुलीलागोपालमिति—प्रभुः कर्तुमकर्तु-
 मन्यथाकर्तुं समर्थत्वात्प्रभुस्तस्मादेव लीलया स्वे-
 च्छाशक्त्या परिगृहीतो विग्रहो देहस्तेन गां वेदं
 तन्मूलं यज्ञादिकं पालयतीति स तथोक्तस्तम् ।
 कुलगोपालमिति—कौ भूमौ लीयत इति कुलं
 शरीरं तच्च गाश्चेन्द्रियाणि च पालयतीति कुलगो-
 पालस्तं सुषुप्तिमूर्च्छादौ मृत इति भ्रान्तिपरिहाराय

प्राणेन सह शरीरादिरक्षक इत्यर्थः । गोपीखेलने-
 ति—गोपीभिः सह विहरणं तदर्थं वनं प्राप्ते वृष्टिस-
 न्निवारणाय गोवर्द्धनगिरिधृतिरकारि सैव लीला
 तस्या अयत्नसाध्यत्वात्तया लीलया लालिताः
 पालिताः गोपाला येन स तथोक्तस्तम् । “अस्या-
 जानतो विद्धि चक्रनमहस्ते विष्णो सुमतिं भजा-
 महे” इत्यादिभिः गोभिर्वैर्निगदितं गोविन्देति
 स्फुटं प्रसिद्धं नाम यस्य स तथोक्तस्तम् । बहुना-
 मानमिति बहून्यसंख्यातानि नामानि यस्य तम्.
 ‘सर्वाण्येतानि नामानि परस्य ब्रह्मणो हरेः’ इति
 पुराणवचनादसंख्यातनामानमित्यर्थः । तर्हि नाम-
 रूपसम्बन्धादसंगत्वहानिरित्यत्राह—गोधीगोचरदू-
 रमिति—“यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा
 सह” इति श्रुतेः । गोऽगोचरात् वा ध्यगोचराच्च
 दूरे निर्गुणे निष्कले परमानन्दरूपे ब्रह्मणि प्रवृत्ति-
 निमित्तानाम् जातिगुणक्रियादीनाम् असंभवा-
 द्वाङ्मनसाऽगम्यमित्यर्थः ॥ ४ ॥

भा० टी०—यदि यह शंका करो कि, ईश्वर केवल चैतन्यरूप होनेसे भक्तोंपर कैसे कृपा करसकताहै—उत्तर यह है कि, उसकी अचिन्त्य शक्ति होनेसे निज इच्छापूर्वक लोकलीलाविहारद्वारा भक्तोंकी रक्षा करताहै । इसीपर आगामी श्लोकहै । (गोपालं) गौओंके पालनेवाले (प्रभुलीलाविग्रहगोपालं) सर्वसामर्थ्यवान् होनेसे लीलार्थ नो धारण किया शरीर उससे वेद, तथा वेदविहित यज्ञादि कर्मके पालनेवाले । (कुलगोपालं) शरीर, प्राण, इन्द्रियआदिके रक्षक । (गोपीखेलनगोवर्द्धनधृतलीलालितगोपालं) गोपियोंके साथ खेल करनेको गोवर्द्धनधार कर गोपालोंपर लाड़ अर्थात् प्यार करनेवाले । (गोभिर्निगदितगोविन्दस्फुटनामानं) वेदवाणियोंसे पुकारागयाहै स्पष्ट गोविन्द नाम जिनका । (बहुनामानं) अनेकशः नामवाले । (गोधीगोचरदूरं) वाणी बुद्धि इन्द्रिय आदिसे दूर ऐसे । (गोविन्दं) इन्द्रियोंके प्रेरक (परमानन्दं) अखण्डानन्द ईश्वरको (प्रणमत) नमस्कार करो ॥ ४ ॥

अवतरणिका—ननु वाङ्मनसोऽगम्यत्वे 'तं त्वौ-
पनिषदं पुरुषं पृच्छामि' इत्युपनिषद्वेद्यत्वं न घटत
इत्याशंक्य आत्मन्यविद्याध्यारोपिततत्तद्धर्मनि-
रसनसुखेन कथंचित् प्रतिपादकाऽभिप्रायेण
तथोक्तमित्याशयेनाह ॥

भाषा—यहां यह शंका करतेहैं कि, जब पूर्वश्लोकमें मन वाणी कर्मसे दूर परमात्माको प्रतिपादन कियाहै तो फिर उस उपनिषत्प्रतिपाद्य पुरुष को पूछताहूं । इत्यादि उपनिषद्वाक्य किसप्रकार घट सकतेहैं । इसका समाधान यह है कि, आत्मामें अविद्याका अध्यारोप कर प्रत्येक धर्मका मुखपूर्वक कथनहै इसी अभिप्रायसे यह श्लोक गोपीमंडलआदिकहतेहैं ।

गोपीमण्डलगोष्ठीभेदं भेदावस्थमभे-
दाभंशश्वद्रोखुरनिर्धूतोद्धतधूलीधूसर-
सौभाग्यम् ॥ श्रद्धाभक्तिगृहीतानन्दम-
चिन्त्यं चिन्तितसद्भावं चिन्तामणिम-
णिमानं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ५

सं०—गोपीति ॥ गोपीनां मंडलं समूहस्तेन सह गोष्ठीभेदः क्रीडाविशेषो यस्य स तथोक्तं रा-
तसक्रीडार्थमित्यर्थः । अतएव भेदावस्थं भेदेनाऽवति-
ष्ठत इति भेदावस्थस्तं रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूवेति
अनेकोपाधिवशादनेकरूपमित्यर्थः स्वतस्त्वभेदा-
भम्अभेदेनाऽऽभानं यस्य स तथोक्तस्तम् । शश्वद-

नवरतं गवां खुरेण निर्द्धूता नितरां कंपिता उद्धृता
 च या धूली रजःपटलिका तथा धूसरमीषत्पांडुरा
 तदेव सौभाग्यं रूपलावण्यं यस्य स तथोक्तस्तम् ।
 श्रद्धेति “अज्ञश्चाश्रद्धानश्च संशयात्मा विनश्यति
 भक्त्यामामभिजानाति” इत्युपनिषत्स्मृतिवचनात्
 श्रद्धाभक्तिभ्यां कैश्चिद्ब्रह्मीतानन्दं मुक्तानां निर्वाणं
 सुखमित्यर्थः । तर्हि तद्ब्रह्मत्वेन जडत्वप्राप्तिरित्या
 शक्याह । अचिन्त्यं मनसोप्यविषयमित्यर्थः
 “अव्यक्तोयमाचिन्त्योयमविकार्योयमुच्यते” इति
 भगवद्भचनात् । अयं त्वविषयश्च नास्त्येवं शशवि
 षाणवदित्यत्राह । चिन्तितसद्भावमिति । “यतो व
 इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति
 यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति तद्विजिज्ञासस्व तद्ब्रह्मेति
 को ह्येवान्यात्कः प्राण्यात् यदेष आनन्दो न स्यात्
 एष ह्येवानन्दयति” इत्यादिश्रुत्या चिन्तितो नि
 श्चितः सद्भावः सत्ता यस्य स तथोक्तस्तम् । चिन्ति

सद्भावादेव चिन्तामणिं चिन्तामणिर्यच्चिन्तितं
 ददाति तद्वदयमपि चिन्तामणिः 'आयुरारोग्यम-
 मांश्च भोसांश्चैवानुषंगिकान् । ददाति ध्यायतां
 तिवेन्त्यं सर्वकामप्रदो हरिः' इतिवचनाद्वाञ्छितप्रद-
 मेत्यर्थः । "अणोरणीयान्" इति श्रुतेः । अणि-
 मानं सूक्ष्मम् अप्रतर्क्यमित्यर्थः ॥ ५ ॥

भा० टी०—(गोपीमंडलगोष्ठीभेदं) गोपियोंके समूहके साथ है
 गोष्ठाविशेष जिसका । अतएव (भेदावस्थं) गोप गोपी गौ
 : त्सादि अनेक भेदोंमें जो स्थित है । और वास्तवमें (अभे-
 तिभिं) अभेदान्वयसे सर्वत्र एकरस प्रकाशमान है । तथा (शश्वद्गोखुर
 विधूतोद्धृतधूलीधूसरसौभाग्यम्) निरन्तर गौओंके खुरोंसे उठी एवं
 डोहीहुई धूलीकरिके सुशोभित अंग जिनका और (श्रद्धाभक्तिगृहीतानन्दं)
 वद्धा भक्तिद्वारा ग्रहण होता है आनन्दमय स्वरूप जिसका अन्यथा
 निअचिन्त्यं) मनसे भी ग्रहण नहीं होसकते तथा (चिन्तितसद्भावं)
 तिदमंत्रोंद्वारा जानीगई है जनकता जिसमें और (चिन्तामणिं)
 चिन्तामणिके समान भक्तोंके मनचिते कार्योंको साधनेवाले तथा
 अणिमानं) अणुरूपमें व्याप्त होनेवाले (गोविन्दं) इन्द्रियप्रेरक
 नि परमानन्दं) अखंडानन्द जगदीश्वरको (प्रणमत) मन वाणी कर्मसे
 न्तमणाम करो ॥ ५ ॥

अथावतरणिका । “जक्षन् क्रीडन् रममाण
स्त्रीभिर्य्यानैर्वा” इति श्रुतेरस्य जीवन्मुक्तवल्लीप
दर्शयति—

भा०—परमात्मा खाताहै खेलताहै रमताहै स्त्रियोंसे यानोंसे इत्यादि
श्रुतिप्रमाणसे इनकी जीवन्मुक्तके समान लीला दिखातेहैं आगे
श्लोककारिके ॥

स्नानव्याकुलयोषिद्वस्त्रमुपादायागमु-
पारूढं व्यादित्संतीरथ दिग्वस्त्रा
वस्त्रमुपाकर्षन्तं ताः ॥ निर्द्धूतद्वयशो-
कविमोहं बुद्धं बुद्धेरन्तस्थं सत्ता-
मात्रशरीरं प्रणमत गोविन्दं परमा-
नन्दम् ॥ ६ ॥

सं०—स्नानमिति ॥ स्नानार्थं जलक्रीडा
व्याकुलाः संभ्रान्ताः याः योषितस्तासां वस्त्रा
उपादाय स्वीकृत्य अगं कदम्बवृक्षमधिरूढमच्यु-
मित्यागमवचनात् । कीदृग्विधमित्यत आह दिग

पाः दिग्वराः अतएव व्यादित्सन्तीः विशेषेण आ-
 विमुच्यन्तीस्ताः योषित उप समीपे आकर्षन्तं
 अनिकटमानयन्तं तर्हि स्त्रीलंपटत्वादयमसंपूर्ण
 त्वात् आह निर्द्धूताः नितरां कंपिता द्वयशोकवि-
 मोहा येन स तथोक्तः बुद्धं प्रबुद्धम् अप्रबुद्धानां वि-
 मुच्यन्तु प्रपारवश्यं न तु प्रबुद्धस्येत्यर्थः । “मनसस्तु
 रा बुद्धिः” इत्यादिना बुद्धेरप्यन्तःस्थं तत्तत्साक्षि-
 या स्थितम् । सत्तामात्रशरीरं “सदेव सौम्य”
 इत्यादिना सत्तामात्रविग्रहं प्रणमतेत्यन्वयः ॥ ६ ॥

भा० टी०—(स्नानव्याकुलयोषिद्वयं) स्नान करनेकेलिये आकुलित
 गोपस्त्रियां उनके (वस्त्रं) वसन अर्थात् कपड़ोंको (उपादाय)
 कर (अंगं) कदमके वृक्षपर (उपारूढं) बैठेहुए हैं तथा (दिग्वस्त्राः
 व्यादित्सन्तीः) वसनराहित होनेसे वस्त्र ग्रहण करनेकी इच्छाहै
 उनकी ऐसी गोपियोंको (उपाकर्षन्तं) समीप बुलारहेहैं और वास्त-
 में (निर्द्धूतद्वयशोकविमोहं) निरन्तर तिरस्कृत कियेहैं शोक मोह
 उनसे तथा (बुद्धं) पूर्ण ज्ञानवानहैं अतएव (बुद्धेरन्तस्थं) बुद्धिमें
 सूक्ष्मरूपसे स्थित एवं (सत्तामात्रशरीरं) तीनों कालमें एकरस

रहनेवाले (गोविन्दं परमानन्दं) गोविन्द परमानन्द परमात्मा
(प्रणमत) नमस्कार करो ॥ ६ ॥

अवतरणिका-परित्राणायेति . भगवद्वचन
लोकरक्षार्थं यदुकुलेऽवतीर्णमतिप्रसन्नपरममङ्ग
लरूपपरमात्मानं प्रस्तौति-

भा०-साधु महात्माओंकी रक्षार्थं प्रतियुगमें भगवत् अवतार
होताहै इस भगवद्गीतावाक्यसे संसारकी रक्षाकेलिये यादवकुल
अवतार लेनेवाले अतिप्रसन्नपरममङ्गलरूप परमात्माकी (कान्तं)
आगामी श्लोकसे स्तुति करतेहैं ॥

कान्तं कारणकारणमादिमनादिं का-
लघनाभासं कालिन्दीगतकालियशि-
रसि नृत्यन्तं मुहुर्नृत्यन्तम् ॥ कालं
कालकलातीतं कलिताशेषं कलिदो-
षघ्नं कालत्रयगतिहेतुं प्रणमत गोविन्दं
परमानन्दम् ॥ ७ ॥

सं०—कान्तमिति ॥ “आर्द्रैक्षिचायमवलीकृत-
 पुष्पवाणमारक्तनेत्रमपरैर्धृतशंखचक्रम् । विन्यस्त-
 नविणुमधुरस्वननादयन्तं संमोहयन्तमिव पाशसृणी-
 मब्रहन्तम् ॥” इति रहस्यागमवचनात्(कान्तं) कमनी
 यमत्यन्तसुन्दरम् । तदेवाह ‘कश्चिदाद्यः सुपुरुषः
 अलालितः कृष्णविग्रहः वंशीनादविनोदेन करोति
 वक्रविवशं जगत्’ किंच ‘योयं चकार गगनार्णवरत्नमि-
 त्तुं योयं सुराऽसुरगुरुः पुरुषः पुराणः । यद्वा समग्र-
 मिदमंतकसूदनस्य देवत्वमेव तदिति प्रतिपादय-
 न्ति’ इति त्रिपुरसुन्दराऽवतारमित्यर्थः “मायांतु
 प्रकृतिं विद्यान्मायिनंतु महेश्वरम्” इति श्रुतेः
 (कारणकारणं) जगत्कारणप्रकृतेरपि कारणम-
 धिष्ठानभूतं तत्राह “ब्रह्म वा इदमग्र आसीत् सदेव
 सौम्येदमग्र आसीत् आत्मा वाऽरे इदमेवाऽग्र
 आसीत्तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशःसंभूतः”
 इत्यादिश्रुतिभ्यश्च आदिं जगदुपादानं स्वयं च

(अनादिं) आदिकारणं न विद्यते यस्य स तथो
 क्तस्तं स्वतः सिद्धमित्यर्थः (कालघनाभासम्
 कृष्णमेघवत् श्यामसुन्दरम् (कालिन्दीगतकालिये
 यशिरसि) कालिन्दी यमुना तद्गतकालियनागस
 शिरसि मुहुर्मुहुर्वृत्त्यन्तं 'कालोऽस्मि लोकक्षयकृत् क
 वृद्धो लोकान् समाहर्तुमिहप्रवृत्तः' इति भगवद्वचस्त
 नात् । (कालं) कालात्मकं संहारकर्तारम् । स्वअ
 तु (कालकलातीतं) कालो भूत भविष्यवर्त्तमाकृ
 लक्षणः । कालस्यांशं निमेषकाष्ठादिप्रभृतयति
 कलाश्च अतीत्य वर्त्तत इति कालकलातीतस्तम
 "अत्यतिष्ठदशांगुलम् अतो ज्यायांश्च पूरुषः अन
 न्यत्र धर्मात् अन्यत्राऽधर्मादन्यत्राऽस्मात् कृता वि
 कृतात् अन्यत्र भूताद्भव्याच्च यत्तत्पश्यति तद्भदन्य
 देव विदितादथोऽविदितात् इति" श्रुतेः । कार्य्यका
 रणसंघरहितमिति भावः । तथापि संसारावस्थाय
 (कलिताऽशेषं) "तस्य वाक् तन्ती नामादि

दामानि तस्येदं वाचा तन्त्या नामभिर्दामभिस्सर्व-
 मसितम्” इति श्रुतेः । कलिताः वद्धा अशेषा जीवा
 लियेन स तम् । अभक्तानां भयहेतुमित्यर्थः । भक्ता-
 नान्तु बंधनिवर्त्तकमित्यत आह (कलिदोषघ्नं)
 कलेर्दोषाः विहिताऽकारणप्रतिषिद्धकरणलक्षणा-
 रस्तान् दोषान् स्मरणमात्रेण हन्ति नाशयतीति तम् ।
 व अत्राहुः “कलावत्राऽपि दोषाब्धे विषयासक्तमानसः ।
 कृत्वा तु सकलं पापं गोविन्दस्मरणाच्छुचिः ॥ अ-
 यतिपापप्रसक्तोऽपि ध्यायन्निमिषमच्युतम् । भूयस्त-
 मपस्वी भवति पंक्तिपावनपावनः ॥ हास्येनापि
 नमस्कारः प्रयुक्तः शार्ङ्गपाणये । संसारस्थूलबंधेभ्यो
 विमुक्तो भवति क्षणात्” कलिमलापहमित्यर्थः
 सूर्य्यात्मना (कालत्रयगतिहेतुं) कालत्रयस्य
 संध्यात्रयस्य हेतुं प्रणमतेत्यन्वयः ॥ ७ ॥

भा० टी०— (कान्तं) परमसुन्दरं (कारणकारणं) जगत्कारणं
 प्रकृतिकेभी अधिष्ठानभूत तथा (कालिन्दीगतकालियाशिरसि नृत्यन्तं
 मुहुर्नृत्यन्तं) यमुनाजीर्मे निवास करनेवाले कालीनागके फणोंपर वारंवार

नाचनेवाले एवं (कालं) जगत्संहारकर्त्ता और आप (कालकलातीतं
भूत, भविष्य, वर्त्तमान लक्षणधारी काल एवं त्रुटि, निमेष, काष्ठा
कलाओंको उल्लंघन कर रहनेवाले अर्थात् कार्यकारणसंघातसे रहित
तथा संसारकी अवस्थामें (कलिताशेषं) समस्त जीवोंको निज नाश
वाणीरूपी रस्सीमें बांधनेवाले और (कलिदोषघ्नं) कलियुगजनित संसार
पापोंको नाशकरनेवाले तथा सूर्यरूपसे (कालत्रयगतिहेतुं) प्रा
मध्याह्न सायं त्रिसंध्याओंके कारणभूत (गोविन्दं परमानन्दं) गोवि
परमात्माको (प्रणमत) भलेप्रकार प्रणाम करो ॥ ७ ॥

अवतरणिका—नरनाट्येऽपि अशेषगीर्वाणवा
धतया वृन्दावनस्थं गोविन्दं स्तौति ॥

भाषा—(नरनाट्य) मनुष्य लीलामेंभी समस्त देवताओंके दर्प दल
वाले वृन्दावननिवासी गोविन्द भगवान्को आगामी (वृन्दावन
श्लोक करके स्तुति करतेहैं ॥

वृन्दावनभुवि वृन्दारकगणवृन्दाराधि-
तवन्द्येहं कुन्दाभाऽमलमन्दस्मेरसु-
धानन्दं सुहृदाऽऽनन्दम् ॥ वन्द्याऽ
शेषमहामुनिमानसवन्द्यानन्दपदद्व-

न्दं वन्द्याऽशेषगुणाऽब्धिं प्रणमत
गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ८ ॥

इति श्रीशङ्करस्वामिप्रणीतगोविन्दाष्टकं स्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

सं०—वृन्दावनेति वृन्दावनभुवि वृन्दा-
रण्यप्रदेशे रासक्रीडायां प्रवृत्तायां वृन्दार-
कानां गणाः देवगणाः तेषां वृन्दं समूहस्तेना-
राधिता पूजिता वन्द्या श्लाघनीया ईहा क्रीडा यस्य
तथोक्तस्तम् (कुन्दाभामलः.) कुन्दाभा कुन्दवल्ली-
कुसुमस्येवाभा कान्तिर्यस्य स कुन्दाभः कुन्दाभ-
श्वामलमन्दस्मेरश्चेति कुन्दाभाऽमलमन्दस्मेरः स
एव सुधा पीयूषं कुन्दाभामलमन्दस्मेरसुधा तथा
आविर्भूत आनन्दोऽतिशयविशेषो यस्य स तथो-
क्तस्तम् (सुहृदानन्दं) सुहृदां सुष्ठुचित्तानामा-
नन्दं मुक्तानां निर्वाणसुखमित्यर्थः (वन्द्याऽशेष).
वन्द्यास्तेऽशेषाः महासुनयश्चेति वन्द्याऽशेषमहा-

मुनयो नारदाद्यास्तेषां मानसेन हृदयेन वन्द्यं
 ध्येयमानन्दपूर्वकं पदद्वंद्वं यस्य स तथोक्तस्तम् ।
 (वन्द्याशेषगुणाः) वन्द्याश्च तेऽशेषगुणाः शान्त्या-
 दयस्तेषामब्धिमाधानस्थानं समस्तगुणाकरमि-
 त्यर्थः (प्रणमत) इति मध्यमपुरुषबहुवचनं
 लोकशिक्षार्थम् ॥ ८ ॥

भा० टी०—(वृन्दावनभुवि वृन्दारकगणवृन्दाराधितवन्द्येहम्) वृन्दा-
 वनकी भूमिमें रासक्रीडाके समय देवगणोंके समूहसे पूजन एवं सराहना
 की गई है क्रीडा जिसकी तथा (कुन्दाभाऽमलमन्दस्मेरसुधानन्दं) कुन्दके
 पुष्पसदृश विकाशमान जो मन्द मुसकानरूपी भृमृत ता करिके उदय
 हुआ है आनन्द जिसका और (सुहृदानन्दं) शुद्धहृदयवाले मुक्तजनोंके
 आनन्द मोक्षसुखरूपी एवं (वन्द्याशेषमहामुनिमानसवन्द्यानन्दपदद्वंद्वं)
 जगत्त्वन्दनीय जो नारदादि ऋषिगण उनके हृदयों करके आनन्दपू-
 र्वक ध्यान किये गये हैं चरणयुगल जिसके तथा (वन्द्याशेषगुणाब्धिम्)
 वन्दनीय समस्त गुणोंके आधारभूत (गोविन्दं परमानन्दं) गोविन्द
 परमात्माको (प्रणमत) मन, वाणी, कर्मसे नमस्कार करो ॥ ८ ॥

अवतरणिका—यस्त्वेतत् गोविन्दाष्टकं संगदितं
 पठति सकामश्चेत् काम्यमानं फलमुपैति

निष्कामो मामुपैतीति स्तोत्रपाठकानां फलं कीर्तयति गोविन्देति ॥

इति श्रीआनन्दगिरिकृतगोविन्दाष्टकटीका संपूर्णा ॥

भा०— जो इस कहेहुए गोविन्दाष्टकको कामनासहित पाठ करे उसके अभीष्ट सिद्ध होवेंगे और निष्काम पाठ करे तो वह ईश्वरमें लीन होयगा यही आगामी श्लोकसे फलश्रुति कहतेहैं ॥

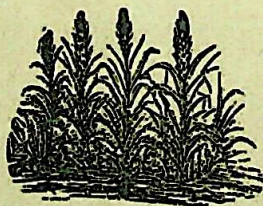
फलश्रुतिश्लोकाः ।

गोविन्दाष्टकमेतदधीते गोविन्दार्पित-
सञ्चेता गोविन्दाऽङ्घ्रिसरोजध्यान-
सुधाजलधौतसमस्ताऽघः ॥ गोविन्दा-
ऽच्युतमाधव विष्णो गोकुलनायक
कृष्णेति नित्यं गायन् यास्यति भक्तो
गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ९ ॥

भा० टी०—गोविन्देति (यः) जो (गोविन्दाऽर्पितसंचेताः) गोविन्दभगवान्में चित्त लगाकर तथा (गोविन्दाऽङ्घ्रिसरोजध्यान-सुधाजलधौतसमस्ताऽघः) गोविन्दजीके चरणाऽरविन्दका ध्यानरूपी अमृतजलसे धोये हैं समस्त पाप जिसने ऐसा (भक्त) सेवक (गोविन्दाऽच्युत माधव विष्णो गोकुलनायक कृष्णोति) गोविन्द, अच्युत माधव, विष्णो, गोकुलनायक, कृष्ण (इति) ऐसे (गायन्) गाता-हुआ (एतत्) इस (गोविन्दाष्टकं) गोविन्द अष्टकको (नित्यं) सदा (अधीते) पाठ करैगा वह (गोविन्दं परमानन्दम्) परमात्माको (यास्यति) प्राप्त होवेगा ॥ ९ ॥

इति श्रीयुत-पण्डित-कन्हैयालालरचितभाषाटीका समाप्ता ।

॥ शुभं भवतु ॥



“ श्रीवेङ्कटेश्वर ” स्टीम, प्रेस—बंबई.

**“श्रीवेङ्कटेश्वर” छापाखानेकी परमोपयोगी
स्वच्छ शुद्ध और सस्ती पुस्तकें।**

यह विषय आज २५।३० वर्षसे अधिक हुआ भार-
तवर्षमें प्रसिद्ध है कि, इस छापाखानेकी छपी हुई पुस्तकें
सर्वोत्तम और सुन्दर प्रतीत तथा प्रमाणित हुई हैं सो इस
यन्त्रालय में प्रत्येक विषय की पुस्तकें जैसे—वैदिक,
वेदान्त, पुराण, धर्मशास्त्र, न्याय, श्रीमांसा, छन्द, ज्योतिष,
काव्य, अलंकार, चम्पू, नाटक, कोष, वैद्यक, साम्प्रदायिक
तथा स्तोत्रादि संस्कृत और हिन्दी भाषाके प्रत्येक अवसर
पर विक्रीके अर्थ तैयार रहते हैं। शुद्धता स्वच्छता तथा
कागजकी उत्तमता और जिल्द की बँधाई देश भरमें
विख्यात है। इतनी उत्तमता होनेपर भी दाम बहुत ही
सस्ते रखे गये हैं और कमीशनभी पृथक् काट दिया जा-
ता है। ऐसी सरलता पाठकों को मिलना असंभव है संस्कृत
तथा हिन्दीके रसिकोंको अवश्य अपनी २ आवश्यकता-
नुसार पुस्तकों के मँगानेमें झुटि न करना चाहिये ऐसा
उत्तम, सस्ती और शुद्ध माल दूसरी जगह मिलना
असम्भव है ‘सूचीपत्र’ मँगा देखो ॥

सम्राज श्रीकृष्णदास,

“श्रीवेङ्कटेश्वर” छापाखाना—सेतवाड़ी—बम्बई.

$$\begin{array}{r} 2203) 10 \\ 2943) 42 \\ \hline 7726 \end{array}$$

$$\begin{array}{r} 2792 \\ 82109 \\ 98110 \\ \hline 72198 \end{array}$$

$$\begin{array}{r} 382052 \\ 224723 \\ \hline 724711 \end{array}$$

$$\begin{array}{r} 232411 \\ 220310 \\ \hline 854121 \end{array}$$

$$\begin{array}{r} 244225 \\ 200100 \\ \hline 444325 \end{array}$$

$$\begin{array}{r} 2091 \\ 220310 \\ 2792 \\ \hline 72198 \end{array}$$

$$232411$$

